P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* (Part-1) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

बदलते सामाजिक मूल्य और वृद्ध विमर्श (गिलिगडु के विशेष संदर्भ में)

प्रतिभा प्रसाद
विभागाध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
कुल्टी कॉलेज,
कुल्टी, पश्चिम बर्द्धमान

सारांश

समकालीन दौर में चित्रा मुद्गल बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न रचनाकार हैं। उनकी कृति मानवीय मूल्यों की गहरी पड़ताल करती हैं। उनकी दृष्टि व्यक्ति और समाज के विभिन्न कोनों को उकेरती हैं। आज के आधुनिक समाज में वृद्धजन सबसे अधिक उपेक्षा के शिकार हो रहे हैं। आमवृद्ध व्यक्ति हो या सरकारी नौकरी से सेवानिवृत्त पेंशनधारी वृद्ध – सबकी मनोदशा प्रायः एक–सी हो गयी है। वे अपने बच्चों की उपेक्षा से स्वयं को अकेला महसूस करने लगे हैं। उनकी स्थिति बद–से–बदतर होती चली जा रही है। जीवन के अंतिम पड़ाव में उन्हें उनके बच्चे ही बोझ समझने लगते हैं, इस पीड़ा का दंश उन्हें मरणासन्न होने तक सालता रहता है। चित्रा जी ने अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से "गिलिगडु' में इस यथार्थ को उजागर किया है।

मुख्य शब्द : भूमण्डलीकरण, बाजारवाद, उदारीकरण, उपेक्षित, जटिलता, पक्षधरता, आत्मीयता, अनुभूति, अवसाद, बहिर्मुखी, आत्मविश्लेषण, अनावृत, जीवनानुभवों, उद्घाटित।

प्रस्तावना

आज जहाँ भूमण्डलीकरण, बाजारवाद तथा उदारीकरण के इस दौर में मनुष्य के हित की बात कही जा रही है, वहीं जीवन के अंतिम पड़ाव में आकर वह उपेक्षित और असहाय होकर रह गया है। आधुनिक समय में, वृद्धजन के प्रति हमारी दृष्टि संकीर्ण तथा संकुचित हो गयी है। वे हमारे लिए अनुपयोगी तथा अनावश्यक सिद्ध होते चले जा रहे हैं। वे एकाकीपन तथा उपेक्षा का शिकार होते जा रहे हैं। आज मानवता को ताक पर रख दिया गया है। उनके अकेलेपन तथा उपेक्षित जीवन को विभिन्न कृति में उकेरा जा रहा है। आज हमारी चिंता विशाल वृद्धजन के सुखमय जीवन की है। वे हमारे लिए उपयोगी तथा पथ–प्रर्दशक हैं। आज की जटिलताओं से भरे जीवन में हम उनके प्रति असंवेदनशील होते जा रहे हैं। हमारी यही असंवेदनशीलता हमारे सामने अनेकानेक प्रश्न खड़ा करती है, जिस कारण हम अपने बुजुर्गों के प्रति न्यायसंगत व्यवहार कर सकें।

नारी अस्मिता और मानवीय विकास एवं पक्षधरता करने वालों में चित्रा मुद्गल का नाम अग्रगण्य है। उनकी रचनाएँ विविध पहलुओं को आधार बनाकर लिखी गयी हैं। उसमें नारी जीवन यथार्थ, दलित अस्मिता, किन्नर जीवन के अनछुए पहलुओं को भी उठाया गया है। इसी क्रम में वृद्ध जीवन की मार्मिक अभिव्यक्ति उनकी कृति 'गिलिगडु' में मिलती है। वृद्धों की समस्या हमारे समाज में बढ़ती ही जा रही है। इसका कारण उनके प्रति हमारी असंवेदनशीलता का होना है। हमारी दृष्टि संवेदनहीन हो गयी है। हमारे मन में उनके प्रति आत्मीयता एवं सम्मान की भावना का ह्रास हो गया है। हम उन्हें अपने काम के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। हमारी नजर उनकी धन–सम्पत्ति पर है। हम उन्हें अपने काम के लिए प्रयुक्त करते हैं, किन्तु जब उनकी निर्भरशीलता हमारे ऊपर ज्यादा हो जाती है तब वे हमें बोझ लगने लगते हैं। ऐसे ही विषय–वस्तु को आधार बनाकर लेखिका ने इस कृति का प्रणयन किया है।

"गिलिगडु' में दिल दहला देने वाली पीड़ा की अनुभूति होती है। इसमें दो बुजुर्गों के अकेलेपन, दुःख–दर्द, मानसिक, दबाव तथा शारीरिक पीड़ा की अभिव्यक्ति मिलती है। "गिलिगडु' का साधारण अर्थ होता है – 'चिड़िया'। इसमें निहित चिड़ियों अर्थात् अबोध बालिकाओं को बुजुर्गों का सहारा मिलता है। इसमें जीवन के बहुरंगी रूपों का सहारा लेकर उसे उभारा गया है। जसवंत सिंह इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं, जो अवकाश प्राप्त इंजीनियर थे। इनके साथ–ही विष्णु नारायण स्वामी, जो रिटायर्ड थे – 'कर्नल स्वामी' कहलाने लगे थे। इन दोनों पात्रों के इर्द–गिर्द पूरी कथा घूमती रहती है। जसवंत सिंह कानपुर निवासी थे। अपनी पत्नी एवं मित्र के निधन के पश्चात् वे अकेले पड़ जाते हैं।

उस पर उनकी बवासीर की बीमारी परेशान की हुई थी। वे अपने कानपुर के जायदाद की देखभाल की जिम्मेदारी सुनगुनियां को सौंप देते हैं। सुनगुनियां उनकी काफी कदर किया करती थी, यही कारण है कि मालिक के कहने पर अपनी बेटियों का नाम 'रामवती–सोमवती' से बदलकर कात्यायिनी आसरे और कुमुदनी आसरे कर देती है। डॉक्टर के कहने पर वे कानपुर से दिल्ली अपने पुत्र नरेन्द्र तथा बहु सुनयना के यहाँ आते हैं। यहाँ आते ही शुरु होती है उनके मानसिक तनाव तथा अवसाद की कहानी। वे घर आकर जिम्मेदारी मिलने से तो खुश होते हैं परन्तु उन्हें जिम्मेदारी मिलती भी तो है टॉमी को सैर कराना। टॉमी को रोज सुबह सैर और फारिग कराकर लाने के क्रम में एक दिन वे गिर पड़ते हैं तभी उनकी भेंट कर्नल स्वामी से होती है। कर्नल स्वामी उन्हें घर तक पहुँचाते हैं परन्तु इसके एवज में वे उन्हें अपने घर बुलाकर चाय पिलाना चाहते हैं, किन्तु यहाँ उनकी परवशता आड़े आ जाती है। वे अपनों के बीच अपने आपको अकेला और अपरिचित मानते हैं। उनके जूते घीस–घीसकर पुराने पड़ चुके थे, परन्तु बेटे नरेन्द्र को इतनी फुर्सत ही नहीं थी कि उसकी नजर उनके फटे जूतों पर जाती। यदि नजर जाती भी तो जूते पर खर्च किए गए पैसों को वह फिजुल–खर्ची करार कर देता। उनके फटे जूते को देखकर कर्नल स्वामी उन्हें एक जोड़ी जूते भेंट स्वरूप देते हैं। जहाँ जसवंत सिंह अत्यन्त अंतरमुखी व्यक्तित्व के थे वहीं कर्नल स्वामी उनके विपरीत बहिर्मुखी व्यक्तित्व के धनी थे। वे अपनी विचारधारा से उन्मुक्त तथा खुले विचारों वाले थे। वे अपने पुत्र, बहू तथा पोते–पोतियों के साथ सम्मानपूर्वक रहा करते थे। उनकी बहु उनका ख्याल रखती थी तथा उनकी स्थिति भाँप कर उनके अनरुप ही भोजन बनाया करती थी। वे अपने बेटे–बहू तथा पोते–पोतियों के साथ खुले विचारों के साथ रह रहें थे, परन्तु जसवंत सिंह को यह सुख प्राप्त न हो सकता था। यही कारण है कि वे सोचते हैं – "दरअसल उपेक्षा और लांछनों के चीरते दंशों से वे कोसों दूर हैं। कल्पना भी नहीं उस अवमानना की जो बूढ़े पेड़ के तने पर आरी–सी चली है। बेटों, बहूओं, पोतों, पोतियों ने उन्हें हाथों–हाथ रखा हुआ है।"[1] उनके बेटे और बहू को उनकी पसंद–नापसंद से कोई लेना–देना नहीं था। वे उनकी चिंता जरा–सी भी करने के पक्ष में नहीं थे। उन्हें दिल्ली आकर एक बालकनी को स्लाइडिंग लगाकर कमरे में तब्दील हुए स्थान पर रहने को मजबूर होना पड़ता है। उस पर भी बहू द्वारा पड़ोसी की बेटी पर नजर लगाने की बात सुनकर वे हतप्रभ हो जाते हैं। इस आरोप के लगने पर जसवंत बाबू फिर कभी हवा खाने के लिए शटर नहीं खोलने की हिम्मत जुटा पाते हैं। वे भीतर–ही–भीतर इस दर्द से कराह उठते हैं कि बेटे के पास उनके कुशल क्षेम पूछने तक का भी अवकाश नहीं था। वे कर्नल स्वामी से प्रभावित होकर अपने पोते की जन्मदिन पार्टी "मैकडोनल्ड्स' में करवाना चाहते हैं, परन्तु जब उन्हें इस बात का पता चलता है कि उनका पोता बिना घर, परिवार वालों के अकेले अपने दोस्तों के साथ पार्टी मनाएगा, तब भीतर–ही–भीतर अपनी इच्छा को दबाते हैं। वे स्वयं से आत्मविश्लेषण करते हैं कि बड़ों द्वारा बच्चों को संवेदना च्यूत किया जा रहा है – "बुद्धि विकास की आड़ में बड़ी खूबसूरती से बच्चों को संवेदना च्यूत किया जा रहा – इतना कि बच्चें कभी परिवार में न लौट सकें, न कभी अपना कोई परिवार गढ़ सके।"[2] इस कारण जसवंत सिंह भरे–पूरे परिवार में भी मेहमानों की तरह अपनी स्थिति मानते थे। जहाँ कर्नल स्वामी के खोखले, ढीले दाँतों की परवाह उनकी बहू किया करती थी, वहीं जसवंत सिंह के बिगड़े हाजमें की किसी को कोई परवाह नहीं थी। उन्हें अपनी इच्छा–अनिच्छा तक भी प्रकट करने का अवकाश नहीं था। उनके परिवार वालों को उनकी पसंद–नापसंद की कोई परवाह ही नहीं थी। वे तो सिर्फ खाने और हगने के काम के योग्य समझे जाते थे। उनके बेटे की नजर उनकी कानपुर वाली जायदाद पर लगी हुई थी तथा बहू सुनयना अपनी मृत सास के गहने लेने की इच्छा भी जाहिर कर चुकी थी। इतना ही नहीं जिस बेटी शालिनी पर उन्हें अटूट विश्वास था, वह भी बैंक की लॉकर में पड़े गहने लेने की फिराक में थी। जसवंत सिंह इस तरह अपने बेटे, बहू तथा बेटी की इच्छा जानकर भीतर–ही–भीतर बहुत आहत होते हैं। उनके भीतर ही भीतर घूटन महसूस होती है जब वे जानते हैं कि बेटे नरेन्द्र को अमेरिका जाना है और वह पिता को किसी वृद्धाश्रम में रखकर अपने दायित्वों से निवृत्त होना चाहता है। यह बात जसवंत सिंह को भीतर तक हिला कर रख देती है। वे स्वयं को अकेला समझने लगते हैं। कई दिनों से कर्नल स्वामी से उनकी भेंट नहीं हो पाती है, अतः वे उनके घर जाना चाहते हैं और ढूँढ़ते हुए उनके बताए गए पते पर पहुँच जाते हैं तब एक रहस्य का उद्घाटन कर्नल स्वामी के पड़ोसी श्रीवास्तव जी के द्वारा होता है कि जिन पुत्रों की वे प्रशंसा किया करते थे, वे वास्तव में उनके पैसों के लालची थे। उनके तीन बेटे थे, जिनमें से दो बेटे उनके ही पैसे से फ्लैट लेते हैं किन्तु वहाँ उनके पिता के लिए जगह मिल पाना असम्भव–सा प्रतीत होता है। बड़ा बेटा पैसे के लालच में उन्हें अपने पास रखता है। उसकी पत्नी अपनी दो पुत्रियों – कात्यायनी और कुमुदिनी को छोड़कर अपने नृत्य गुरु के साथ भाग जाती है। दोनों पोतियों की जिम्मेदारी कर्नल के ऊपर आ जाती है और वे अपने पेंशन का आधा हिस्सा उनकी पढ़ाई के लिए दे देते हैं और आधे हिस्से को बस्ती के गरीब बच्चों की पढ़ाई पर खर्च करते हैं। उनका बड़ा बेटा पैसे की लालच में उन्हें गला दबाकर मार डालता है। कर्नल के जीवन की इस वास्तविकता से परिचित होकर जसवंत सिंह के पैरों तले जमीन खिसक जाती है। पड़ोसी श्रीवास्तव का यह कहना कि "ऐसी कसाई औलादों से तो आदमी निपूता भला। हमें इस बात का कोई गम नहीं कि हमारी कोई अपनी औलाद नहीं।"[3] यह कथन औलाद वालों को एक तीर की भाँति चुभती है तथा जीवन की वास्तविकताओं से हमारा परिचय करवाती है। जसवंत सिंह इन वास्तविकताओं से परिचित होकर अपने जीवन के बड़े फैसले लेने के लिए तत्पर हो जाते हैं। वे अपने कानपुर वाले घर की एकमात्र अधिकारिणी सुनगुनियां को बनाते हैं तथा अपने जीवन में आनेवाली चुनौतियों का सामना करने में उसे समर्थ मानते हैं। अपनी वसीयत में यह लिखवाते हैं कि सुनगुनियां का पुत्र रामरतन अर्थात् अभिषेक आसरे

ही उनकी कपालक्रिया करें। उसे ही वे अपने दाह–संस्कार का अधिकार देते हैं। यह बात उनके पुत्र के लिए बड़ी ही लज्जाजनक होगी तथा हो सकता है कि वह उनके क्रियाकर्म में शामिल भी न हो। ऐसी स्थिति में भी जसवंत सिंह का फैसला अपनी जगह टिका रहता है। उस समय उनकी स्थिति अत्यन्त ही दारुण एवं मार्मिक बन जाती है जब वे यह सोचते या कहते हैं कि इस घर में एक नहीं दो कुत्ते हैं – "एक टॉमी, दूसरा अवकाश प्राप्त सिविल इंजीनियर जसवंत सिंह। टॉमी की स्थिति निस्संदेह उनकी बनिसबत मजबूत है। उसकी इच्छा–अनिच्छा की परवाह में बिछा रहता है पूरा घर। उनके लिए किसी को बिछे रहना जरुरी नहीं लगता।"[4] यह बात कहानी को उसके मर्म तक पहुँचा देती है और हमें सोचने के लिए मजबूर भी करती है कि हम अपने बुजुर्गों को आदमी नहीं जानवर से भी बत्तर जीवन जीने के लिए बाध्य कर रहे हैं। हमारे लिए वृद्ध गैर जरूरी बन गये हैं। यह वृद्ध जीवन का सबसे वीभत्स चेहरा हमारे समक्ष खड़ा कर देता है जब कोई पिता अपने पुत्र को अपने अंतिम क्रियाकर्म करने का अधिकार तक नहीं देता। उनका वक्षस्थल छलनी–छलनी हो जाता है। उन्हें ऐसा आभासित होता है कि "शायद नीम का वक्षस्थल उन्हीं का वक्षस्थल हो।"[5] वे बुजुर्ग वृक्षों की भाँति अपनी–अपनी गिलिगडुओं का भरण–पोषण करने को प्रवृत्त होते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

यह कृति यथार्थ और समसामयिकता, स्वप्न और फैंटेसी, स्मृति और विस्तृति के कई आयामों को छूता अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करता है। रचना को पढ़ते हुए हमारे अनुभव में कुछ नया जुड़ता चला जाता है। यह वृद्ध जीवन के तमाम अंधेरे कोनों को अनावृत करता चलता है। यह वृद्ध जीवन की पीड़ा की नयी अभिव्यक्ति है। इसमें पहचान के संकट को मुख्य रूप से उकेरा गया है। बाजारीकरण के दौर में व्यक्ति–व्यक्ति के बीच मानवीय रिश्तों का आभाव हो गया है जिस कारण वृद्धों के प्रवास की समस्या मुँह खोले खड़ी दीखती है। बूढ़ापे के कारण वृद्ध निर्बल, कमजोर एवं निर्भरशील होता चला जा रहा है। उनके कार्य करने की क्षमता का ह्यास हो जाता है और दूसरे पर उनकी निर्भरशीलता बढ़ती चली जाती है। वे दूसरों के लिए अनुपयोगी बनते चले जाते हैं। जिस कारण उन्हें एकाकीपन तथा उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है। उसे आज की पीढ़ी द्वारा 'एडजेस्टमेंट' करना सिखाया जाता है जिसके उत्तर में वृद्ध यह कहने को मजबूर होते हैं कि "क्या तुम कभी बूढ़े नहीं होगे?"6 मानों यह प्रश्न जसवंत सिंह का नहीं पूरे बूढ़े, वृद्ध समाज का हमसे है, जो हमें हमारी वास्तविकता का भान करा देता है।

निष्कर्ष

इस कृति में लेखिका ने वृद्ध जीवन की अनेकानेक समस्याओं से हमें अवगत करवाया है। यह रचना उन कारणों की खोज करती है। पूरा उपन्यास संवेदनाओं के क्षरण की महागाथा बनकर उपस्थित हुआ है। जीवनानुभवों का रचनात्मकता के साथ गहरा रिश्ता होता है और रचनाकार उन्हीं अनुभवों को रचनात्मक ढंग से उद्घाटित करता चलता है। हमें हमारे बुजुर्ग वर्ग के अनुभवों से लाभान्वित होने की जरूरत है न कि उन्हें उपेक्षित बनाकर रखने की। आत्मकेन्द्रित होते समाज को अपनी सोच एवं समझ को विकसित तथा बदलने की जरूरत मालूम पड़ती है। कृति में लेखिका ने पहली गैर–मौजूदगी से लेकर तेरहवीं गैर–मौजूदगी के माध्यम से दो बुजुर्गों की अत्यन्त ही ह्मदय विदारक कथा कही है। इसके श्लैप पृष्ठ पर अंकित है कि ""यह कृति इस विऽास को और भी गहरा करती है कि साहित्यिक मूल्यों में सामाजिक सार्थकता का महत्व हमेशा बना रहेगा।"[7] इस प्रकार यह कृति वृद्ध जीवन के मर्म को गम्भीरता प्रदान करती है। यह वृद्धों को अपनेपन का आश्रय देने की माँग करती है। हमारे बुजुर्गों का शाया हमारे लिए नितांत आवश्यक है। उनकी छत्रछाया ही हमें जीवन–संघर्षों के लिए तैयार करती है। यह कृति वृद्ध विर्मश को नया अर्थ प्रदान करती है और बदलते सामाजिक मूल्यों की गहरी पड़ताल करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0–61*
2. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0–34*
3. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0–138*
4. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0–96*
5. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0–141*
6. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0–80*
7. *मुद्गल चित्रा– गिलिगडु (उपन्यास), संस्करण–2018, प्रकाशन – सामयिक प्रकाशन, पृ0 श्लैप से*